RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-02
February -2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

कथाकार कमलेश्वर की 'वही बात' और स्त्री मुक्ति के प्रश्न

शशिकान्त

शोध–प्रज्ञ जे॰आर॰एफ॰, हिन्दी विभाग नव नालन्दा महाविहार (मानित विश्वविद्यालय) नालन्दा – 803111

स्वातंत्रयोत्तर हिन्दी साहित्य में 'स्त्री मुक्ति' के लिए आंदोलन अपनी बहुआयामी परिदृश्य में अभिव्यक्त हुआ है। स्त्री मुक्ति के प्रश्न तत्कालीन समय में एक मुख्य विषय था। कथाकार कमलेश्वर के एक लघु उपन्यास 'वही बात' में स्त्री की आकांक्षाओं और पुरूष की महत्वाकांक्षाओं के द्वन्द्व की कथा है। उसमें अस्मिताबोध ही नहीं बल्कि अपने अस्तित्व के लिए भी संघर्षशीलता दीख पड़ती है। यूँ तो समकालीन समय में हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत स्त्री विमर्श का काफी शोर है; जिसकी पुष्ठभूमि में कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा, मन्नू भंडारी, चित्रा मुद्गल, नासिरा शर्मा, मृदुला गर्ग जैसे नाम प्रमुख हैं; लेकिन कमलेश्वर की 'वही बात' की बात ही निराली है। स्त्री मुक्ति के प्रश्न को जिस साहस और बेबाकी से उन्होंने कथा नायिका समीरा के माध्यम से अभिव्यक्त किया है वह चरित्र आज भी हमारे परिवेश में मुश्किल से पच पायेगा।

चीफ इंजीनियर प्रशान्त अपनी नवविवाहिता पत्नी समीरा को लेकर पहाड़ी पर अवस्थित बंगले में आते हैं; जहाँ उन्हें एक बाँध बनवाने का जिम्मा सौंपा गया है। प्रशान्त बाँध बनवाने में इतना मशगूल हो जाता है कि पत्नी (समीरा) के लिए समय नहीं बच पाता। साइट पर से ही वह समीरा को फोन करता है –

'समी ! क्या कर रही हो?
बैठी हूँ... समीरा का वही जवाब।
– मैं सात बजे तक आ जाऊँगा।
– अच्छा।
फिर... फिर... वही – वही बात – उसी तरह।
दूसरा दिन, तीसरा दिन, चौथा दिन, पाँचवाँ दिन।
वही फोन की घंटी – और वही बात...।
–'समी ! क्या कर रही हो?
– बैठी हूँ...
– मैं सात बजे तक आ जाऊँगा....।
– अच्छा...।

फिर वही – वही बात.... उसी तरह पचासवाँ दिन... फोन की घंटी बजी। इसके पहले कि दूसरी ओर से प्रशान्त कुछ कहे, वह मशीन की तरह बोल उठी – बैठी हूँ... अच्छा।''[1]

फिर प्रशान्त की महत्वाकांक्षा बढ़ती जाती है और अपने प्रमोशन के लिए उसका दिल्ली आना – जाना शुरू हो जाता है। इधर समीरा डिप्टी – इंजीनियर नकुल के प्रति आकर्षित होकर अपने एकांतिक जीवन में रंग भरने का प्रयास करती है। समीरा इस सच्चाई को स्वीकार करते हुए कहती है – ''प्रशान्त से तुम नहीं, मैं खुद बात करूँगी। तुम बात करोगे तो वह अपमानित महसूस करेगा। जिस सच्चाइ को मैंने तुम्हारे साथ मंजूर किया है, उसे प्रशान्त के सामने भी मंजूर करने में मुझे कोई हिचक नहीं है।''[2] समीरा का उपरोक्त कथन स्त्री के अस्तित्व एवं उसकी आकांझाओं को जिस बेबाकी से प्रस्तुत की है वह एक नये स्त्री विमर्श को जन्म देती है। समीरा का प्रशान्त से तलाक हो जाता है और कथाकार कमलेश्वर ने इस वैधानिक ही मानते हुए लिखते है '' अगर शादी पवित्र है, तो तलाक भी उतना ही पवित्र है... शादी के गलत हो जाने पर भी तलाक न लेना शायद पाप होता।''[3]

समीरा पुरूषों की महत्वकांझाओं को नकारते हुए जीवन के छोटे–छोटे क्षणों को स्वीकारती हुई कहती है – ''औरत छोटे–छोटे क्षणों के लिए तरसती रह जाती है।''[4]

उन्नीसवीं सदी में भारत का सम्पक आमजन का विदेशोंसे तीव्र गति से हुआ तो एकबारगी गाँवों में पीढ़ी–दर–पीढ़ी गुजरा समाज ने करवट ली। वह अपने गाँव समाज को छोड़कर शहर आया। अपने मूल समाज से कटा महसूस करता हुआ यह मध्यवर्ग राष्ट्र के रूप में भारत की अवधारणा को महसूस कर 'कल्पित राष्ट्र' के नए प्रतीक गढ़े। इन प्रतीकों में भाषा एवं धर्म के अलावा स्त्री भी शामिल हो चली। यह स्त्री का रूप 'आर्यकुल ललना' थी। ''उसके कंधों पर धर्म के निर्वाह क दायित्व क साथ–साथ राष्ट की गौरव की रक्षा का भी भार आया। ... मध्यवर्ग अपनी मध्यवर्गीय नूतन भौतिक परिस्थितियों की आवश्यकता और हिंदू राष्ट्र के अनुकूल पड़ने वाली जिस स्त्री को तैयार कर रहा था, वह नैतिकता, आधुनिक गृह–प्रबंधन, घर एवं राष्ट्र की जिम्मेदारियों के निर्वाह में तो विक्टोरियाई ब्रिटिश औरतों के समकक्ष थी और शील, सतीत्व और पतिव्रत्य

RRIJM 2015, All Rights Reserved

में अनुसूया, सती, सवित्री और सीता के समान थी।''[5] इस कुहेलिका को कमलेश ने तोड़ते हुए लिखा – ''मुश्किल यही है कि कोई पति पूरा पति नहीं बन पाता... या तो तुम दकियानूस बन जाते और हड्डो–पसली तोड़कर रख देते... या बराबरी का दर्जा देकर एक–दूसरे को हम पूरा कर सकते। हाथ उठाते हो, तो अधूरा... और चाहते हो कि पत्नी पूरी हो जाए!''[6]

समीरा जब नकुल के साथ रहने लगती है तो लोग तरह–तरह की बात बनाकर उसके सम्बन्धों पर व्यंग्य बाण चलाते हैं। इस पर समीरा कहती है – ''पता नहीं क्यों, लोग और सब देखते है, जिन्दगी नही देखते! जिन्दगी इस पैसे धरती और आसमान से ज्यादा कीमती है, साहब!''[7] यह कथन वैश्विक महामारी (कोरोना काल) में प्राषांगिक लगता है। स्त्री मुक्ति के प्रश्न को और धारदार बनाते हुए कमलेश्वर बड़ा तीखा प्रश्न करते हुए कहते हैं कि – ''औरत को अपनी जिन्दगी जीने का हक क्यों नहीं है? हम कब–तक उसे बेइज्जत करते रहेंगे? आदमी औरत बदल ले, तो ठीक ! औरत आदमी बदल ले तो गलत ! वाह !...वाह ! क्या मैथेमेटिक्स है।''[8]

कथा आगे बढ़ती है और एक बार फिर पुरूष की महत्वाकांक्षाओं का शिकार समीरा को होना पड़ता है। नकुल दिल्ली से ही मीरा (समीरा) को फोन करता है। नकुल बड़े ही दार्शनिक अंदाज में कहता है कि 'मीर ! मेरा मन तुम्हारे ही साथ है'। लेकिन समीरा जानती है कि उसे नकुल का काल्पनिक मन नहीं, उसकी उपस्थिति, उसकी निकटता, उसका स्पर्श चाहिए। और यह सब धीरे–धीरे कम होता जा रहा था। फिर 'वही बात' –

'' समीरा का खयाल आते ही नकुल उसे फोन करता।
– मीरा !
समीरा कहती – हाँ !
– क्या कर रही हो?
– बैठी हूँ।
– शाम शायद, जरा देर हो जाएगी।
– अच्छा

फिर दूसरे दिन, वही बात। फिर तीसरे दिन, चौथे, पाँचवें, छठे दिन – वही बात।''[9] एक बार फिर समीरा के जीवन में 'वही बात' दुहराई गई थी। नकुल भी प्रशांत की तरह महत्वकांक्षी होने की राह पर चल निकाला। समीरा और नकुल में फिर 'वही बात' होने लगती है। दोनों में अब वही प्रेम, तर्क का रूप लेकर निम्न सम्वादों को जन्म देती है– ''मीरा, ऐसा नहीं सोचते। आदमी जब इन बड़े–बड़े कामों में पड़ता है, तो उन्हें बीच में नहीं छोड़ सकता। –और औरत बहुत छोटी–छोटी बातों, छोटे–छोटे सुखों को लिए आदमी के साथ जीती है, नकुल !''[10]

कहानी आगे बढ़ती है और इसी बीच बाँध में कुछ समस्या के कारण प्रशान्त को निरीक्षण के लिए पुनः आना पड़ता है। इधर नकुल सोचता है कि 'प्रशान्त–समीरा' प्रसंग को लेकर प्रशान्त मेरे पक्ष में फैसला न लेगा। लेकिन नकुल तब हतप्रभ रह गया जब प्रशान्त ने रिपोर्ट में लिखा – ''थर्ड फेज एकदम ठीक था। जैसा नकुल ने सोचा था, वही हो सकता था। बजट बढ़ाने से रोका नहीं जा सकता था और जो नए खर्च नकुल ने बताए थे, वे भी वाजिब थे।''[11] इस रिपोर्ट को देखकर नकुल के मन से एक बोझ उतर–सा गया था। नकुल कृतज्ञता–भरे भाव से प्रशान्त को निहार जा रहा था।

प्रशान्त जब बँगले की ओर चला आ रहा था तब अचानक समीरा पर नजर पड़ी। प्रशान्त ने पूछा – ''कैसी हो?

– वैसी ही .... समीरा ने कहा।''[12]

प्रशान्त ने समीरा का जवाब – 'वैसी ही' को समझ गया कि आदमी अपनी महत्वाकांझाओं से कभी मुक्त नही हो सकेगा? और इस महत्व की आकांक्षा औरत को अकेली कर देती है। समीरा और प्रशान्त का सम्वाद स्त्री मुक्ति के सन्दर्भ में यहाँ उल्लेखनीय है – ''देखो, प्रशान्त.... औरत जब–तक औरत रहती है, अकेली नही छूटती... पत्नी होते ही अकेली होने की राह खुल जाती है। – नहीं, समी (समीरा)... आदमी अपना अकेलापन भी पत्नी को दे देता है.... इसलिए वह दोहरी अकेली हो जाती है... मैं जानता हूँ, आज अगर मैं तुम्हारा प्रमी बन जाऊँ तो न तो तुम अकेली रहोगी, न मैं.... पर सिर्फ प्रेम से जिन्दगी बीतती नहीं,जिन्दगी सहने से चलती है... आज जब मैं तुम्हारा न होना सहता हूँ, तो जीता हूँ....।''[13]

इस कथा के अन्त में कमलेश्र ने डॉ0 प्रशान्त के वक्तव्यों द्वारा जिस यथार्थ की अभिव्यक्ति की है, वह स्त्री मुक्ति के प्रश्न को बड़े ही तार्किक व वैज्ञानिक आधार देती है। कमलेश्वर ने लिखा है – ''डिनर खत्म हो गया, पर लोग वहीं बैठे बातें करते रहे। सिर्फ प्रशान्त और नकुल बाहर बरामदे में आ गए। नकुल खामोश था। फिर प्रशान्त ही नकुल से बोला – नकुल, जो गलती मैंने की है, उसे तुम न दोहराओ। यह हार–जीत का मामला नहीं है। यह एक हकीकत है, दोस्त! समीरा ने मुझे अपने कारणों से छोड़ा था, तुम्हारी वजह से नहीं। अब तुम्हें ऐसे कारण नही देने चाहिए और न ही समीरा को कोई ऐसी वजहें देनी चाहिए कि तुम चल दो। मेरी गलती से तुम दोनों को

– समीरा को और तुम्हें – सोचना चाहिए। एक आदमी की सफलता ही सब कुछ नहीं है। सफलता सबके साथ ही कारगर होती है। मेरी या तुम्हारी सफलता की कीमत समीरा चुकाए या कोई और औरत .... बस, यहीं से जिन्दगी सूरज की तरह ऊपर चढ़ने लगती है, पर घर में शाम उतरने लगती है..... और फिर रात!..... छायाएँ बहुत लम्बी हो जाती हैं..... और अलग– अलग...।''[14]

कथाकार कमलेश्वर ने पारम्परिक भारतीय विवाह परम्परा पर नये शिरे से विचार कर स्त्री मुक्ति के द्वार को खोला है। वे विवाह के बाद अगर दाम्पत्य जीवन में सब–कुछ ठीक नहीं है तो अलग–अलग रास्ते अपनाने की वकालत करते हैं। जिन्दगी सहने का नाम नहीं, जिन्दगी जीने का नाम है। 'वही बात' की नायिका 'समीरा न 'समी' (प्रशान्त द्वारा संबोधित) बन पाती है न मीरा (नकुल द्वारा संबोधित)। उसे न 'समी' बनना है न 'मीरा', बल्कि वह एक मुक्कमल 'समीरा' बनना चाहती है। जब वह 'समीरा' बन जाएगी तो सचमुच वह मुक्त हो जाएगी। अब स्त्रियाँ, पुरूष वर्चव वाले समाज व्यवस्था की अनुगामिनी नहीं, संगिनी बनना चाहती हैं। संगिनी भी कैसी? मजबूर नहीं ! सहने वाली नहीं जीने वाली।

यह बड़े आश्चर्य की बात है कि स्त्री मुक्ति के शीर्षस्थ लेखिका प्रभा खेतान ने 'अन्या से अनन्या' में लिखा है – ''दूसरी औरत पूरी दुनिया में रोने के लिए अभिशप्त होती है। मधु कांकरिया भी लिखती है – 'पत्नी से पति का रिश्ता धरती के रिश्ते की तरह है जिसे वक्ती खुमार में काटता–छाँटता चाहे रहे पर उसे उखाड़ कभी नहीं पाता।' ''[15] हालांकि! उक्त लेखिकाओं का यह मनतव्य यथार्थ है, लेकिन हम पुराने केचुल को जब तक सिद्धांततः त्याग नहीं कर देते नये के प्रस्फुटन की सम्भावना कम हो जाती है। इस संदर्भ में कमलेश्वर की जो वैचारिकी है वह स्त्री मुक्ति के संघर्ष में आगे तक गई है और 'वही बात' लघु उपन्यास इन तथ्यों का प्रतिनिधित्व करता है। स्त्री विमर्श के अन्तर्गत 'वही बात' में निहित विचारों का विद्वत् समाज में पुनर्पाठ होने की आवश्यकता महसूस होती है तभी हम स्त्री मुक्ति के प्रश्न को कमलेश्वर के परिप्रेक्ष्य में समझ कर उसे नव आकार दे सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वही बात, कमलेश्वर, राजकमल प्रकाशन, संस्करण – 2004 ई0 दूसरी आवृत्ति – 2014 ई0, ईलाहाबाद, पृ0 सं0 – 21
2. वही., पृ0 सं0 – 48
3. वही., पृ0 सं0 – 55
4. वही., पृ0 सं0 – 61
5. आजकल (मासिक पत्रिका), मार्च 2020 ई0, संपादक फरहत परवीन, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, पृ0 सं0 – 7
6. वही बात, कमलेश्वर, राजकमल प्रकाशन, पहला संस्करण – 2004 ई0, दूसरी आवृत्ति – 2014, ईलाहाबाद, पृ0 सं0 – 65
7. वही., पृ0 सं0 – 68
8. वही., पृ0 सं0 – 69
9. वही., पृ0 सं0 – 74
10. वही., पृ0 सं0 – 76
11. वही., पृ0 सं0 – 82
12. वही., पृ0 सं0 – 82
13. वही., पृ0 सं0 – 84
14. वही., पृ0 सं0 – 86
15. आजकल (मासिक पत्रिका), मार्च 2020 ई0, संपादक फरहत परवीन, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, पृ0 सं0 – 11

RRIJM 2015, All Rights Reserved